क्या वैश्विक दक्षिण में मज़बूत लोक प्रशासन संस्थान तैयार किए जा सकते हैं ?: सत्ताईसवाँ न्यूज़लेटर (2025)

लाल आकृतियाँ, यूसुफ़ अब्देलके (सीरिया), 1994

प्यारे दोस्तो,

ट्राईकॉन्टिनेंटल : सामाजिक शोध संस्थान की ओर से अभिवादन।

एक दशक पहले की बात है, मुझे यूनाइटेड स्टेट्स (यूएस) और दक्षिणपूर्वी एशिया के एक छोटे से देश के बीच चल रहे व्यापार समझौते पर बातचीत सुनने का मौक़ा मिला। इस समझौते की बातचीत में एक मुद्दा ऐसा भी था जो दुनिया के लिए बहुत मामूली था लेकिन इस देश के लिए बहुत अहम। पर मेरा ध्यान इस समझौते की बातचीत पर न होकर इस चीज़ पर था कि दोनों देशों के प्रतिनिधि मंडल में कितना बुनियादी फ़र्क़ था।

यूएस का जो प्रतिनिधि मंडल स्विट्जलैंड के जिनेवा के एक सामान्य से दफ़्तर में पहुँचा था उसकी दो ख़ासियत थीं : पहली, इसमें बड़ी संख्या में वकील और उनके सहायक थे और दूसरी, उनके पास फ़ाइलों का अंबार था जिससे वे बिंदुवार अपनी बात आसानी से रख सकते थे। दूसरी ओर एशियाई देश की ओर से सिर्फ़ एक अधिकारी था जो संयुक्त राष्ट्र में उस देश का प्रतिनिधि था, वह न तो व्यापारिक मामलों का विशेषज्ञ था और न ही कोई वकील जिसके पास अपना मत रखने के लिए ढेर सारे दस्तावेज़ हों। इस समझौते में असमानता साफ़ दिखाई दे रही थी। यहाँ यूएस के प्रतिनिधियों ने एक एशियाई देश के अधिकारी को चारों ओर से घेर लिया। बातचीत के बाद मैं इस एशियाई अधिकारी के साथ कॉफ़ी पीने गया। वह काफ़ी घबराया हुआ था। उसे महसूस हो रहा था जैसे उसे लूट लिया गया हो।

हैंड टू माउथ, ईयन बांजा (केन्या), 2021

कुछ साल पहले एक पूर्वी अफ़्रीकी देश के मझोले स्तर के एक अफ़सर ने मुझे बताया कि उन्होंने एक एशियाई बैंक के एक ऋण समझौते पर दस्तख़स्त किए जबकि न तो वे ऐसे दस्तावेज़ के जानकार थे और न ही उनके पास यह पूरा दस्तावेज़ पढ़ने का समय था। इसी वक़्त की बात है कि लैटिन अमेरिका के किसी देश के मंत्रालय के एक अधिकारी ने मुझे बताया था कि वे व्यापारिक समझौतों से जुड़े दस्तावेज़ों के विश्लेषण का काम एक फ़ाउंडेशन को आउटसोर्स कर देते हैं, यह फ़ाउंडेशन यूएस स्थित एक ग़ैर-लाभकारी संगठन से जुड़ा हुआ है। यानी समझौते में उनके मत उनके अपने विश्लेषण पर आधारित नहीं होते बल्कि इस फ़ाउंडेशन के विश्लेषण पर आधारित होते हैं। ऐसे और भी बहुत से उदाहरण मिल सकते हैं। इनका ज़िक्र यहाँ इसलिए नहीं किया जा रहा कि इन देशों या अधिकारियों को शर्मिंदा किया जाए जिन्हें नवउपनिवेशवादी व्यवस्था ने इन मुश्किल हालात में डाला है।

कोई अफ्रीकी पोप नहीं, पॉल नदेमा (यूगांडा), 2015

इन संस्थागत असंतुलनों को आँकड़ों में दिखा पाना मुश्किल है ख़ासतौर से इसलिए क्योंकि ऐसी कोई अंतर्राष्ट्रीय एजेंसी नहीं है जो सरकारी अधिकारियों या समझौता में मध्यस्थता करने वालों का डेटा इकट्ठा करती हो। इससे जुड़ा जो थोड़ा बहुत डेटा उपलब्ध है वह विश्व बैंक **Worldwide Bureaucracy Indicators Dashboard** पर मिलता है जिससे पता चलता है कि वैश्विक उत्तर की कुल श्रमजीवी (काम करने वाली) जनसंख्या का 18.6% सरकार के लिए काम करता है जबकि वैश्विक दक्षिण में यह आँकड़ा 10% के पास है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के एक **अध्ययन** के मुताबिक़ चाड, कोटे डी आइवर (आइवरी कोस्ट), मेडागास्कर, माली और तंज़ानिया जैसे अफ्रीकी देशों में यह संख्या 3% से कम है। सरकार में व्यापारिक समझौतों के लिए कितने वार्ताकार या वकील हैं, इसका सटीक आँकड़ा तो नहीं है, लेकिन ऊपर दिए गए विवरण से उत्तर और दक्षिण के बीच की असमानता साफ़ ज़ाहिर है।

रेसाडो [ब्राज़ील का एक पारंपरिक समारोह], डॉल्टॉन पौला (ब्राज़ील), 2009

यह ग़ैर-बराबरी बहुत ही गहरी है (सिर्फ़ चीन और वियतनाम जैसे समाजवादी देशों को छोड़कर जहाँ बड़ी तादाद में बेहतरीन प्रशिक्षण वाले सरकारी अफ़सर हैं, चीन में तो श्रमबल का **पाँचवा** भाग सरकारी क्षेत्र में ही है)। इस ग़ैर-बराबरी के कारण बहुत स्पष्ट हैं:

1. वैश्विक दक्षिण के कई लोक प्रशासन शिक्षण संस्थानों को अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष की ऋण-सरकारी ख़र्च में कटौती की नीतियों की वजह से बजट की भारी कमी झेलनी पड़ी है। जिसकी वजह से ये अपने शिक्षकों को प्रशिक्षित नहीं कर पाते और न ही ऐसा नवीनीकृत सिलेबस तैयार कर पाते हैं जो लोग प्रशासन में आने वाले भावी अधिकारियों को विशेष राष्ट्रीय स्थितियों के लिए तैयार कर पाएँ।
2. इसके साथ ही राज्य के योजना आयोगों और शोध विभागों को भी या तो बंद किया जा रहा है या तो उनमें कटौती की जा रही है। यही वे संस्थान हैं जो सरकारी अधिकारियों और कर्मचारियों को अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में अपने देश की स्थिति के बारे में बौद्धिक समझ तैयार करने में मदद करते हैं और राष्ट्रीय विकास कार्यक्रम तैयार करने का काम भी। ऐसे संस्थानों के अभाव में सरकारी अधिकारियों के पास न स्पष्ट आदेश होते हैं और न ही मार्गदर्शन।
3. सरकारी कर्मचारियों और अधिकारियों को न उचित वेतन मिलता है और न ही प्रशिक्षण इसलिए इनमें देशप्रेम और उपनिवेशवाद विरोधी भावना की कमी आयी है। नवउदारवाद और सांस्कृतिक साम्राज्यवाद द्वारा छेड़े गए इस मनोवैज्ञानिक युद्ध का मतलब है कि सरकारी कर्मचारियों की नई पीढ़ी अपने लोगों की भलाई के लिए तर्क देने में असमर्थ है और विभिन्न प्रकार के प्रलोभनों (**भ्रष्टाचार** सहित) में आ सकती है। जनता में व्यक्तिवाद की बढ़ती भावना ने भी कैरियरवाद और राष्ट्रीय हित की जगह निजी धन और विशेषाधिकारों के संचय को बढ़ावा दिया है।
4. एक ओर सरकारी संस्थान या तो बंद हो रहे हैं या इन्हें सीमित किया जा रहा है तो वहीं दूसरी ओर 'तकनीकी सहायता' देने के नाम पर पश्चिमी देशों के पैसे से चलने वाले ग़ैर-सरकारी संगठनों की संख्या बढ़ती जा रही है। इन कार्यक्रमों में अमूमन ऐसे लोगों को काम पर रखा जाता है जिनकी शिक्षा विदेशी विश्वविद्यालयों में हुई हो और वे ऐसे वर्ग से होते हैं

जो अपने देश की अधिकांश आबादी से कटे हुए होते हैं तथा देश की ऐतिहासिक और समाजशास्त्रीय पृष्ठभूमि की बहुत अधिक समझ नहीं रखते। इसके साथ ही इन संस्थानों का एजेंडा इनके विदेशी संरक्षक तैयार करते हैं जिनके अपने निजी हित होते हैं।

बासी शराब, अयोतुंदे ओजो (नाइजीरिया), 2022

लोक प्रशासन के सरकारी संस्थानों में कमी आने और साथ ही सरकारों में अपने समाज की संप्रभुता को बनाए रखने की इच्छाशक्ति के अभाव के कारण बहुराष्ट्रीय कॉरपोरेशनों और अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों को इन देशों के दिशानिर्धारण करने की छूट मिल गयी है। योग्यता और राजनीतिक स्पष्टता में कमी की वजह से वैश्विक दक्षिण के देश निरंतर उन विदेशी संस्थानों के एजेंडे के सामने घुटने टेकते नज़र आते हैं, जो जानते हैं उन्हें क्या हासिल करना है। वैश्विक दक्षिण में प्रशासनिक योग्यता को विकसित करने के काम के साथ-साथ इस क्षेत्र के लिए **विकास के एक नए सिद्धांत** को विकसित

करने की भी आवश्यकता है जिससे ये नवउपनिवेशवादी हस्तक्षेप से अलग अपना ख़ुद का एजेंडा तय कर सकें।

कुछ साल पहले जिनेवा में उस मीटिंग में बैठकर यूएस अधिकारियों और वकीलों को उस दक्षिणपूर्वी एशियाई सरकारी अफ़सर को घेरते हुए देखकर मुझे 1967 में लिखी निज़ार क़ब्बानी की कविता 'Footnotes to the Book of the Setback' [नाकामयाबी की क़िताब के फ़ुटनोट] की याद आयी। यह कविता छह दिवसीय युद्ध में फ़िलिस्तीन की हार के कुछ समय बाद लिखी गई थी। कविता सीरिया के दमिश्क में छपी थी, इस पर बाद में प्रतिबंध लगा दिया गया था और चोरी-छिपे इसे अरब दुनिया तक पहुँचाया गया। इसकी दो पंक्तियाँ मेरे ज़हन में आई थीं :

> हमारे दुश्मन सरहदें लांघकर नहीं आए थे।
>
> वे तो हमारी कमज़ोरियों की दरारों से चींटियों की तरह घुस आए थे।

हमें अपनी कमज़ोरियों को दूर करना ही होगा।

स्नेह सहित,

विजय